Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 GISRRJ | Volume 5 | Issue 4 | ISSN : 2582-0095

उपनिषदों में वाक् तत्त्व का स्वरूप

डॉ.भोला नाथ
असि.प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, गनपत सहाय पी.जी. कालेज, सुल्तानपुर, उ.प्र.

Article Info
Volume 5, Issue 4
Page Number : 15-18
Publication Issue :
July-August-2022
Article History
Accepted : 20 July 2022
Published : 04 August 2022

शोध-सारांश : उपनिषद् ऋषियों ने वाक् को ज्ञान के साधन के रूप में देखा है। जो दीपक की तरह अर्थ को प्रकाशित करती है और स्वयं भी प्रकाशित होती है। भर्तृहरि वाक् को एक तत्त्व के रूप में देखते है तथा पश्यन्ती, मध्यमा, बैखरी रूप वाक् को तीन स्तरों में विभाजित करते हैं। वाणी सीमित अर्थ को प्रकाशित कर सकती है लेकिन असीमित ब्रह्म को प्रकाशित नहीं कर सकती है। इस प्रकार वाक् तत्त्व प्रकाश का ही दूसरा रूप सिद्ध होती है। उपनिषद् ऋषि वाक् को अचेतन तो भर्तृहरि ने शब्द को ब्रह्म कहकर चेतन रूप माना है। भर्तृहरि के अनुसार शब्दब्रह्म रूप परावाक् से चेतनवत् होकर हो पश्यन्ती आदि वाक् विषय को प्रकाशित करती हैं।

मुख्य शब्द : उपनिषद्, वाक्, पश्यन्ती, वेदान्तसार, ब्रह्म, प्रश्नोपनिषद्, वाक्यपदीय आदि।

सभी दर्शनों में वाक् को एक कर्मेन्द्रिय के रूप में माना गया है। सांख्य दर्शन के अनुसार अहंकार से पञ्चतन्मात्रा और एकादश इन्द्रियों की अभिव्यक्ति होती है।(1) एकादश इन्द्रियों में पञ्चज्ञानेन्द्रियां, पञ्चकर्मेन्द्रियां और मन है। पञ्चकर्मेन्द्रियों में वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ हैं। इस प्रकार वाक् एक कर्मेन्द्रिय के रूप में वर्णित है। इसी प्रकार योग दर्शन और अद्वैत वेदान्त ने भी वाक् को एक कर्मेन्द्रिय के रूप में माना है। व्याकरण दर्शन वाक् को एक तत्त्व के रूप में वर्णित करता है और उस वाक् तत्त्व के तीन रूप मानता है– पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी।(2) भर्तृहरि के बाद के आचार्यों ने परा वाक् को वाणी का चौथा रूप माना है जो कि अनिर्वचनीय रूप है।

इसी प्रकार उपनिषदों में भी वाक् का वर्णन कई रूपों में मिलता है, जो कि वाक् के स्वरूप को दर्शाता है। किसी वस्तु का स्वरूप उस वस्तु की विशेषता को दर्शाता है या यों कहें कि किसी वस्तु की विशेषता उस वस्तु के स्वरूप की ओर इंगित करती है। विशेषण यद्यपि स्वरूप को दर्शाता है, किन्तु ये दोनों शब्द एक दूसरे के पर्यायवाची नहीं कहे जा सकते। इन दोनों में अन्तर होता है। विशेषण एकांगिक होता है, जबकि स्वरूप तात्त्विक होता है। विशेषण भाषा पर आश्रित होता है। स्वरूप अनिर्वचनीय होता है। किसी वस्तु की कितनी भी विशेषता हम दें किन्तु उन विशेषताओं से वस्तु के स्वरूप का बोध नहीं हो सकता,'किसी वस्तु के अनेक गुण होते हैं जो व्यक्ति एक वस्तु के सभी गुणों को जान जाता है वह सभी वस्तुओं के सभी गुणों को जान जाता है'।(3)

वेदान्तसार में 'सच्चिदानन्द' की व्याख्या में कहा गया है कि सत्, चित् और आनन्द ब्रह्म के विशेषण नहीं हैं। अपितु वस्तु के स्वरूप ही हैं, अर्थात् सत् ही ब्रह्म है, चित् ही ब्रह्म है और आनन्द ही ब्रह्म है। एक दृष्टि से वह ब्रह्म सत् है दूसरी दृष्टि से

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

चित् रूप और तीसरी दृष्टि से आनन्द रूप।(4) इस प्रकार इस व्याख्या से हम विशेषण और स्वरूप को एक नहीं कह सकते हैं। किन्तु इतना निश्चित है कि विशेषणों का प्रयोग करके उस वस्तु के अनिर्वचनीय स्वरूप की ओर इंगित कर सकते हैं।

इस प्रकार उपनिषदों में वाक् तत्त्व के विषय में जो कुछ कहा गया है, वह वाक् तत्त्व के स्वरूप की ओर संकेत करता है। वाक् के बैखरी रूप को वाणी कहा जाता है। यह वाणी निर्बल और सबल दो प्रकार की हो सकती है। निर्बलवाणी प्रभावहीन होती है तो सबल वाणी सबको प्रभावित करने वाली होती है। इसीलिए केनोपनिषद् के शान्तिमन्त्र में ऋषि वाक्, प्राण, चक्षु, श्रोत्र आदि इन्द्रियों के पुष्ट होने की प्रार्थना करते हैं- **ॐ आप्यायन्तु ममाङ्गानि वाक्-प्राण-चक्षुः श्रोत्रमथो बलमिन्द्रियाणि च सर्वाणि॥ केनोपनिषद् शान्ति पाठ॥(5)**

उपनिषद् कहती है कि वाणी स्वभावतः निष्प्राण होती है। स्वतः किसी कार्य में संलग्न नहीं हो सकती है। जिस प्रकार अचेतन शरीर चेतन जीवात्मा से चेतनवत् होने के बाद कार्य करता है, उसी प्रकार वाणी भी चेतन आत्मा से चेतनवत् होकर ही विषय को प्रकाशित करती है, **'यद्वाचानभ्युदितं येन वागभ्युद्यते'।(6)**

उपनिषद् मत में चेतनतत्त्व सिर्फ ब्रह्म है। शेष जगत् माया का कार्य होने से अचेतन है। शरीर भी अचेतन है। शरीर के मन, बुद्धि, वाणी आदि सभी अवयव भी अचेतन ही हैं। लेकिन आत्मा प्रत्यक्ष रूप से वाणी को प्रकाशित नहीं करता है। आत्मा बुद्धि को, बुद्धि मन को, मन जठराग्नि को, जठराग्नि प्राण को प्रेरित करता है। फिर प्राण से प्रेरित होकर वाणी उत्पन्न होती है। ऐसा ही निर्देश पाणिनीय शिक्षा में किया गया है।(7)

चूंकि वाणी एक कार्य है। कार्य होने से एक सीमित तत्त्व है। दीपक की तरह वाणी भी स्वयं प्रकाशित होती है और विषय को भी प्रकाशित करती है। लेकिन यह वाणी एक सीमित विषय को ही प्रकाशित कर सकती है। असीमित ब्रह्म तत्त्व को नहीं। **न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनो न विद्मो न जानीमो यथैतदनुशिष्यात्।(8)** यहाँ वाणी को ज्ञान के एक साधन के रूप में दिखाया गया है किन्तु वह ब्रह्म का ज्ञान कराने में असमर्थ है।

'यद्वाचानभ्युदितं येन वागभ्युदिते'(9) अर्थात् जो वाणी से प्रकाशित नहीं है किन्तु जिससे वाणी प्रकाशित है। वाणी से प्रत्येक कार्य का ज्ञान हो सकता है। सभी कार्य सीमित होने से वाणी से प्रकाशित किये जा सकते हैं। लेकिन आंशिक रूप से ही, संपूर्णता में नहीं; क्योंकि किसी भी वस्तु को संपूर्णता में सिर्फ अनुभव से जाना जा सकता है। वस्तु का तात्त्विक साक्षात्कार से अनुभव होता है। इस प्रकार अनुभव से उसे संपूर्णता में जाना जा सकता है। लेकिन ब्रह्म को वाणी के द्वारा आंशिक रूप से भी नहीं जाना जा सकता है उसे खण्डों में नहीं जाना जा सकता है। अंशों में नहीं जाना जा सकता है क्योंकि ब्रह्म अखण्ड रूप है, **'अखण्डं सच्चिदानंदमवाङ्मनसगोचरं'**।(10) इसीलिए कहते हैं कि ब्रह्म का एक झलक भी मिल जाय तो संपूर्णता में उसका ज्ञान हो जाता है।(11)

वाणी, मन और चक्षु आदि ज्ञानेन्द्रियां प्राण से नियंत्रित होते हैं। इनका अनन्तिम कारण प्राण प्रतीत होता है। प्राण के नियंत्रित होने पर वाणी, मन आदि स्वतः नियंत्रण में आ जाते हैं। इसीलिए योगी अपने प्राण को नियंत्रित करके मन और वाक् को नियंत्रित करने का प्रयास करते हैं। इसी भाव को व्यक्त करते हुए प्रश्नोपनिषद् में कहा गया है कि जिस प्रकार मधुकर राज के ऊपर उठने पर सभी मक्खियाँ ऊपर चढ़ने लगती हैं और उसके बैठ जाने पर सभी बैठ जाती हैं उसी प्रकार वाक्, मन, चक्षु और श्रोत्रादि प्राण के उठने पर ऊपर उठने लगती हैं तथा बैठने पर शान्त हो जाती हैं। **'तद्यथा मक्षिका मधुकरराजानमुत्क्रामन्तं सर्वा एवोत्क्रामन्ते तस्मिंश्च प्रतिष्ठमाने सर्वा एव प्रतिष्ठन्त एवं वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रं च ते प्रीताः प्राणं स्तुवन्ति॥'(12)**

वेद को ब्रह्म की वाणी बताया गया है, **'अग्निर्मूर्धा चक्षुषी चन्द्रसूर्यो दिशः श्रोत्रे वाग्विवृताश्च वेदाः। वायुः प्राणो हृदयं विश्वमस्य पद्भ्यां पृथ्वी ह्येष सर्वभूतान्तरात्मा॥'(13)** अर्थात् अग्नि जिसका मस्तक है चन्द्रमा और सूर्य नेत्र हैं। दिशायें कर्ण हैं। प्रसिद्ध वेद वाणी है। वायु प्राण है, सारा विश्व जिसका हृदय है, और जिसके चारों ओर पृथ्वी प्रकट हुई है। वह देव सम्पूर्ण भूतों का अन्तरात्मा है। जिस प्रकार ब्रह्म त्रैकालिक सत्य है, उसी प्रकार ब्रह्म की वाणी रूप वेद भी त्रैकालिक सत्य है। तीनों कालों में वेद वचन सत्य रूप हैं। इस प्रकार वेदों को आज भी प्रासंगिक माना जाता है।

वाक्यपदीय में भर्तृहरि ने वाणी के तीन रूप माना है। पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी। बाद के वैयाकरणों ने परा वाणी को भी माना है। उनका कहना है कि भर्तृहरि परा वाणी को मानते हैं लेकिन शब्दों में उसका कथन नहीं किया है; क्योंकि वह अनुभव रूप है। उपनिषद् में एक स्थान पर अक्षर ब्रह्म को वाक् रूप बताया गया है,**'तदेतदक्षरं ब्रह्म स प्राणस्तदु वाङ्मनः'।(14)** अर्थात् वही यह अक्षर ब्रह्म है। वही प्राण है तथा वही वाक् और मन है। संभवतः परा वाणी को ही यहां ब्रह्म के तुल्य बताया गया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि उपनिषदों में वाणी को ज्ञान के एक साधन के रूप में देखा गया है। यद्यपि ज्ञान का साधन पञ्च ज्ञानेन्द्रियाँ है और वाक् को कर्मेन्द्रिय के रूप में रखा गया है। फिर भी वाणी शब्द प्रमाण के रूप में वस्तुओं का ज्ञान कराती है। वाणी ज्ञान का साधन होते हुए भी ब्रह्म का ज्ञान कराने में असमर्थ है।

वाक् के बैखरी रूप को वाणी कहा जाता है। यह वाणी निर्बल और सबल दो प्रकार की हो सकती है। निर्बल वाणी प्रभावहीन होती है तो सबल वाणी सबको प्रभावित करने वाली होती है। वाणी स्वभावतः निष्प्राण होती है। स्वतः किसी कार्य में संलग्न नहीं हो सकती है। जिस प्रकार अचेतन शरीर चेतन जीवात्मा से चेतनवत् होने के बाद कार्य करता है, उसी प्रकार वाणी भी चेतन आत्मा से चेतनवत् होकर ही विषय को प्रकाशित करती है।

वाणी एक कार्य है। कार्य होने से एक सीमित तत्त्व है। दीपक की तरह वाणी भी स्वयं प्रकाशित होती है और विषय को भी प्रकाशित करती है। लेकिन यह वाणी एक सीमित विषय को ही प्रकाशित कर सकती है। असीमित ब्रह्म तत्त्व को नहीं।

वाणी से प्रत्येक कार्य का ज्ञान हो सकता है। सभी कार्य सीमित होने से वाणी से प्रकाशित किये जा सकते हैं। लेकिन आंशिक रूप से ही, संपूर्णता में नहीं; क्योंकि किसी भी वस्तु को संपूर्णता में सिर्फ अनुभव से जाना जा सकता है। वस्तु का तात्त्विक स्वरूप साक्षात्कार से अनुभव होता है। इस प्रकार अनुभव से उसे संपूर्णता में जाना जा सकता है। लेकिन ब्रह्म को वाणी के द्वारा आंशिक रूप से भी नहीं जाना जा सकता है; क्योंकि ब्रह्म अखण्ड रूप है। उसे खण्डों में नहीं जाना जा सकता है। वाणी की अपनी अलग से कोई सत्ता नहीं है। अपितु विवर्त रूप होने से वाक् का पारमार्थिक रूप या मूल स्वरूप ब्रह्म से भिन्न नहीं है।

संदर्भ

1. सांख्यकारिका-22, आचार्य जगन्नाथ शास्त्री, मोतीलाल बनारसी दास, संस्करण-5
2. वाक्यपदीय, ब्रह्मकाण्ड, कारिका-133
3. जैन दर्शन
4. वेदान्तसार-1, सदानंद, व्याख्याकार- आद्याप्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद
5. केनोपनिषद्, शान्ति मंत्र
6. केनोपनिषद्-1.4
7. पाणिनीय शिक्षा, श्लोक -6

8. केनोपनिषद्, खण्ड1.3-4
9. केनोपनिषद् 1.4
10. वेदान्तसार-1
11. ईशावास्य उपनिषद्, ओशो, पीडीएफ, पृष्ठ-3
12. प्रश्नोपनिषद्-2.4
13. मुण्डकोपनिषद् 2.1.4
14. मुण्डकोपनिषद् 2.2.2